ISBN - 978-93-86810-04-5

।। विश्वभाषा साहित्य और रामकथा ।।

अन्तरराष्ट्रीय शोध-संगोष्ठी का कार्यवृत्त

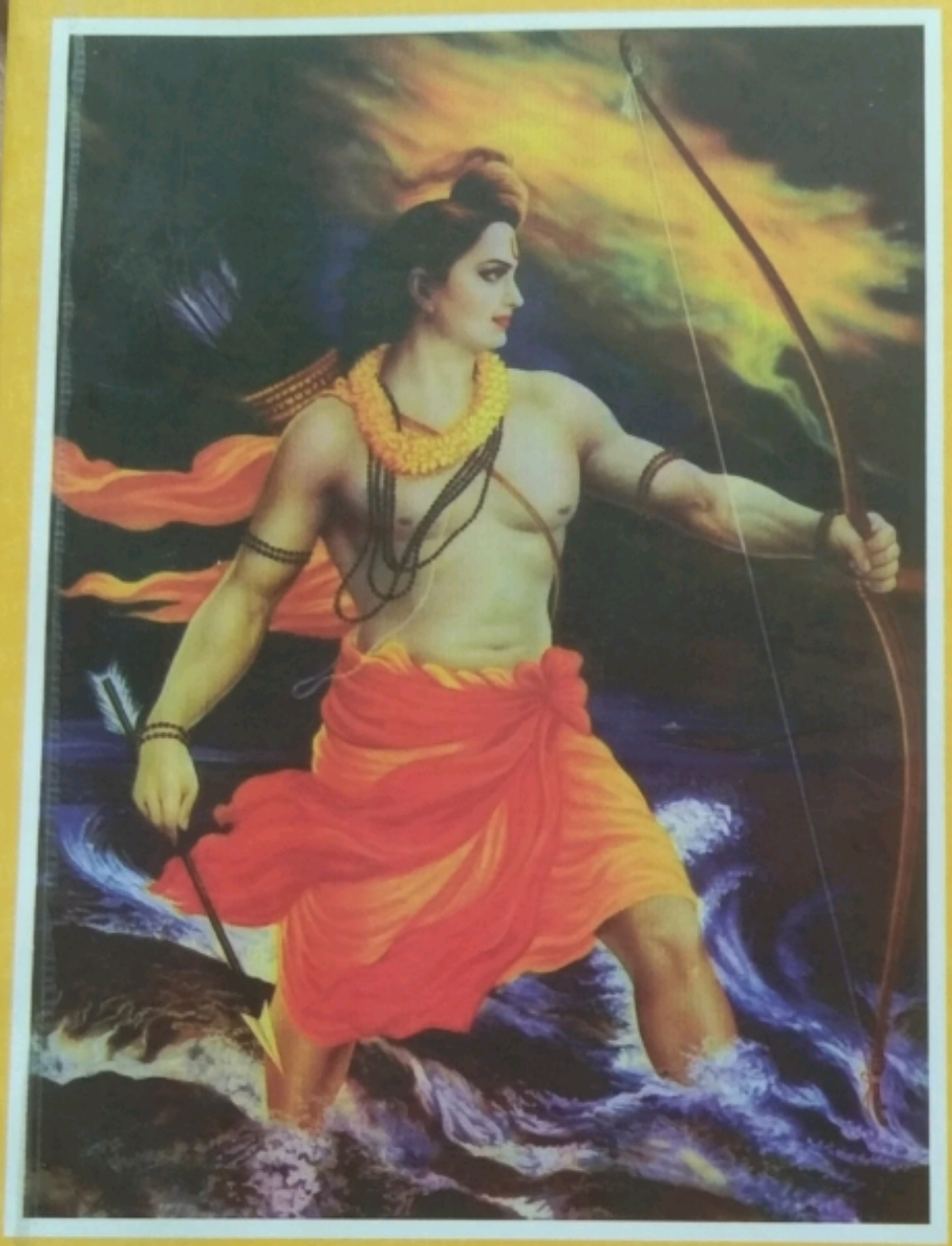

संपादक
डॉ. सरोज गुप्ता

49. रामकथा में वन उपवन का महत्त्व — 223
डॉ. सुकदेव वाजपेयी

50. हिन्दी में राम काव्य परंपरा : एक ऐतिहासिक अनुशीलन — 226
डॉ. भरत कुमार शुक्ला

51. रामचरित मानस में रामराज्य का वर्णन — 232
डॉ. अशोक कुमार पन्या

52. रामायणकालीन अर्थशास्त्र एवं कल्याण की अवधारणा — 236
डॉ. प्रमेश गौतम

53. मर्यादा एक सम्मान – श्रीराम — 243
डॉ. अंकुर गौतम

54. निराला के राम : साधारण मानव के धरातल पर — 247
डॉ. प्रज्ञा पाण्डेय

55. बुंदेली गीतों में रामकथा — 251
अतुल कुमार श्रीवास्तव

56. संशय की एक रात : राम के चरित्र का नव्य रूपांतरण — 255
डॉ. संगीता सक्सेना

57. संत शिरोमणि कबीर और गोस्वामी तुलसी का नाम निरूपण — 260
प्रो. राजन यादव

58. आदिकाव्य रामायण में लोकतन्त्र की अवधारणा — 271
डॉ. किरण आर्या

59. श्रीरामचरितमानस में पुरूषोत्तम श्रीराम का चरित्र — 278
रामानुज रघुवंशी

60. रामराज्य की प्रासंगिकता – अर्थव्यवस्था के संदर्भ में — 283
डॉ. अर्चना यादव

61. वर्तमान की मूल्य चुनौतियों का रामकथा द्वारा समाधान — 288
डॉ. संगीता कुंभारे

62. भक्ति तत्त्व और दक्षिण का राम भक्ति साहित्य — 294
डॉ. तृप्ति उकास

63. रामकथा का कालजयी ग्रन्थ श्रीरामचरितमानस — 299
डॉ. घनश्याम भारती

64. रामकथा की वर्तमान समय में प्रासंगिकता — 302
डॉ. अमर कुमार जैन

65. भारतीय समाज और राम का आदर्श — 305
डॉ. मालती दुबे (रावत)

आदिकाव्य रामायण में लोकतन्त्र की अवधारणा

*डॉ. किरण आर्या

आदिकाव्य रामायण भारतवर्ष का एक सर्वोत्कृष्ट धार्मिक, राजनैतिक एवं ऐतिहासिक ग्रन्थरत्न है। यह आदिकवि महर्षि वाल्मीकि विरचित भारतीय साहित्य का आदि महाकाव्य है। इसमें हिन्दू धर्म एवं संस्कृति के आदर्श मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के समग्र जीवन का काव्यमय वर्णन हुआ है। इस ग्रन्थ में भारतीय संस्कृति तथा लोकतन्त्रीय पक्ष का जितना भव्य रूप उपलब्ध होता है, उतना अन्यत्र दुर्लभ है।

वाल्मीकि अपने इस काव्य के लिये एक ऐसे नायक का अनुसन्धान कर रहे थे जिसमें सभी सद्गुणों की प्रतिष्ठा हो । महर्षि ने ऐसे लोकोत्तर गुणों की एक सूची तैयार की और अपने आश्रम पर कृपापूर्वक पधारे हुये महर्षि नारद से प्रश्न किया–

कोऽन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः।।'1

अर्थात् हे मुने! आपकी दृष्टि में सम्प्रति ऐसा कोई महापुरुष है जो सभी सद्गुणों से सम्पन्न हो? इस प्रश्न से स्पष्ट है कि वाल्मीकि श्री राम के समकालीन थे और कदाचित् उन्होंने रामायण की रचना उस समय की जब रावण वध के बाद राम का राज्याभिषेक हो चुका था। महर्षि ने नारद के मुख से मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के लोकोत्तरचरित्र का वर्णन सुना और ब्रह्मा की प्रेरणा से अपने आर्ष ज्ञान और ऋतम्भरा प्रज्ञा से रामराज्य तथा उसमें सन्निहित विविध चरित्रों का साक्षात् दर्शन किया और तदनुसार समग्र तथ्यों का संकलन करते हुये लौकिक संस्कृत वाङ्मय में प्रथम महाकाव्य की रचना कर आदिकवि होने का गौरव प्राप्त किया।

रामायण में वर्णित रामराज्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस समय राजतन्त्रीय राजव्यवस्था थी। वंशानुगत राजतन्त्र था। राजा का ज्येष्ठ पुत्र युवराज होता था और पिता के बाद वह राजपद पर अभिषिक्त होता था। प्राचीन भारत में राजतन्त्र की यह विशेषता थी कि राजतन्त्र में लोकतन्त्रीय अवधारणा विद्यमान थी। सर्वाधिकार सम्पन्न राजा शासन का सर्वोच्च होते हुये भी पुरोहित, वेदज्ञ ब्राह्मण, मन्त्री, अमात्य, सभासद, धर्मपरिषद् की शक्ति से नियन्त्रित था। राजतन्त्र का यही स्वरूप रामायण में भी है। अयोध्या नरेश महाराज दशरथ ने अपने ज्येष्ठ पुत्र श्री राम को राजपद पर अभिषिक्त करने का निर्णय सभासदों, अमात्यों, वेदज्ञ द्विजों, गुरु वशिष्ठ एवं पुरवासियों की सहमति से राजपरिषद् में लिया'2। श्री राम के वनगमन के पश्चात् चित्रकूट में श्री भरत के शतशः अनुनय–विनय एवं गुरु वशिष्ठ, वामदेव जाबालि, आदि ऋषियों के अनुरोध पर भी उन्होंने अयोध्या लौटकर राजपद ग्रहण करना स्वीकार नहीं किया। तब चित्रकूट में ही गुरु

*सहायक प्राध्यापक, संस्कृत–विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

वशिष्ठ, उपस्थित अमात्यों ,मन्त्रियों एवं पुरवासियों की सभा में श्री राम के प्रतिनिधि के रूप में श्री भरत द्वारा राज्यसंचालन के दायित्व के निर्वहन का निर्णय लिया गया। चौदह वर्ष का वनवास पूर्ण करने के बाद श्री राम के अयोध्या लौटने पर उन्हें राजपद पर चारों लोकपालों, देवपालों, वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि काश्यप, कात्यायन, सुयश, गौतम, विजस आदि मन्त्रियों, ब्राह्मणों, पुरवासियों श्रेष्ठ योद्धाओं के द्वारा अभिव्यक्त किया गया। इस प्रकार श्री राम ने लोकतन्त्रीय परम्परा के अनुसार सर्वानुमति से राजपद ग्रहण किया'3। तथा श्रेष्ठ मन्त्रियो, अमात्यों एवं वेदज्ञ ब्राह्मणों के परामर्श से अयोध्या पर शासन किया'4। लंकाधिपति रावण ने श्री राम द्वारा लंका पर आक्रमण का भय उपस्थित होने पर राजसभा बुलाकर सभासद एवं मन्त्रियों के परामर्श से युद्ध करने का निश्चय कियाथा। इस प्रकार रामायण काल में राजा निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी नहीं था। वह लोकतन्त्रीय, अवधारणाओं के अनुसार पुरोहित, अमात्य, नीतिज्ञों, सभासदों के परामर्श से राज्य कार्य का संचालन करता था'5।

रामायणकालीन व्यवस्था वैदिक साहित्य से अनुप्राणित है। वैदिक अवधारणा में धर्म (विधि) शक्ति सर्वोच्च है। इससे उच्च कुछ भी नहीं। राजा भी धर्म से ही अपनी शक्ति प्राप्त करता है और क्रियाशील होता है। विधि की शक्ति से ही निर्बल सबल पर शासन करता है। –

धर्म तदेतत् क्षत्रस्य क्षत्रं यद्धर्मः तस्मात् धर्मात्परं नास्ति अथोऽबलीयान् बलीया सभा शंसते धर्मेण यथा राज्ञैवं यो वै स धर्मः सत्यं वै तस्मात् सत्यं वदतमाहुर्धर्मं वदतीति धर्मं वा वदन्तं सत्यं वदतीत्येतत् ह वै तदुभयं भवति।'6

वस्तुतः प्राचीन भारत में धर्म ही समाज की विधि है और धर्म से ही समाज शासित होता था। रामायणकालीन प्रशासनिक एवं न्यायिक व्यवस्था वैदिक ज्ञान की प्रयोगशाला है जहां धर्म शासन है। राजा स्वयं धर्म से शासित एवं नियन्त्रित है। उसकी शक्तियां विधि के – श्रुति, स्मृति, सदाचार तथा वेद अविरुद्ध लोक धर्म से मर्यादित होती हैं, वह कथमपि इनका उल्लंघन नहीं करता। अयोध्या के चक्रवर्ती सम्राट महाराज दशरथ ने राम के वियोग में अपने जीवन की आहुति दे दी किन्तु कुलधर्म और मर्यादा की रक्षा के लिए कैकेयी को दिये गये अपने वचन के पालन में न चाहते हुए भी राज्याभिषेक के स्थान पर श्रीराम को चौदह वर्ष के वनवास का आदेश दिया। श्रीराम का शासन तो धर्म–शासन का अन्यतम आदर्श है। वह मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, धर्म के साक्षात् विग्रह (रामो विग्रहववान् धर्मः) हैं। राज्याभिषेक के अवसर पर पिता की आज्ञा से उनका लक्ष्मण और सीता के साथ चौदह वर्ष के लिए मुनिवेश में वन–गमन त्रिभुवन में स्तुत्य है। वह राजा के ज्येष्ठ पुत्र थे। राजपद पर उनका वैधानिक अधिकार था। राजा उन्हें युवराज बनाना चाहते थे। गुरु वशिष्ठ एवं सभासदों के परामर्श से उनके राज्याभिषेक की तिथि भी निश्चित थी। इसी बीच कैकेयी को दिये गये वरदान के कारण स्त्री के मोह में भ्रमित राजा ने श्रीराम को चौदह वर्ष के वनवास का आदेश दिया। गुरु वशिष्ठ, सभी अमात्य और अयोध्यावासी राम का वनवास नहीं चाहते थे। लक्ष्मण ने उनके अधिकार को स्मरण कराया और राजा को बन्दी बनाकर राज–सिंहासन पर बलात् अधिकार जमाने का परामर्श दिया, इस कार्य में अपनी सेवाएँ अर्पित कीं।

भरत, शत्रुघन अयोध्या में नहीं थे। राजा दशरथ स्वयं राम से वन न जाने का आग्रह करते हैं। वे राम से कहते हैं कि हे राम! कैकेयी को वरदान देने के कारण मेरी बुद्धि भ्रमित हो गयी है। अतः तुम आज ही मुझे सत्ताच्युत करके अयोध्या के राजा बन जाओ।–

अहं राघव कैकेय्या वरदानेन मोहितः।
अयोध्यायां त्वमेवाद्य भव राजा निगृह्य माम्।।7

इस प्रकार सारी परिस्थितियाँ राम के सिंहासनरूढ़ होने के अनुकूल थीं। कदाचित् दूसरा कोई व्यक्ति होता तो निःसन्देह राजा की आज्ञा का उल्लंघन कर सत्ता का अधिग्रहण कर लेता, किन्तु राम तो मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, धर्मबुद्धि हैं, धर्म–पालक हैं, त्याग की मूर्ति हैं और रघुकुल के कुल–धर्म और वृत्त के संरक्षक हैं। वह जानते हैं कि पिता ने स्त्री–मोहवश प्रतिज्ञा की है जो जब प्रतिज्ञा की है तो कुल–धर्म के अनुपालन में इसका निर्वहन होना चाहिए और इस निर्वहन का दायित्व मुझ पर है। अतः वह अपने वन–गमन के निर्णय पर दृढ़ रहते हैं और युवराज होते हुए भी सर्वस्व त्याग कर वन–गमन कर जाते हैं। यही रामराज्य का धर्म–शासन है और राम का कुल–धर्म–पालन।

लंका–विजय के बाद यह जानते हुए भी कि सीता निष्पाप हैं, शुद्ध हैं, परम पावन हैं किन्तु लोकापवाद, लोकनिन्दा एवं परगृह में स्त्री के निवास के कलंक से बचने के लिए राम का अत्यंत कठोर होकर सबके सामने लंका में सीता को अपने चरित्र की अग्नि–परीक्षा के लिए प्रज्जवलित अग्नि में प्रवेश कराना तथा अयोध्या में राज्याभिषेक के बाद राज्य के एक सामान्य व्यक्ति द्वारा निर्दोष सीता के चरित्र–विषयक प्रवाद पर गर्भिणी, आसन्नप्रसवा सीता का निर्जन वन में निर्वासन कदाचित् राजा राम को लोक–अभिव्यक्ति, लोक–चेतना एवं लोक–शक्ति के समक्ष बौना सिद्ध करता है। निष्कलंक सीता अकारण अपनी अग्नि–परीक्षा और अग्नि–परीक्षा में शुचिता सिद्ध होने के बाद भी निर्वासन के अमानवीय कृत्य से घोर व्यथित हैं। निर्वासन के समय वह लक्ष्मण से कहती हैं– "हे लक्ष्मण! तुम उस राजा से मेरी ओर से कहना कि अपने सामने अग्नि–परीक्षा में सफल होने पर भी मुझे लोकापवाद के भय से त्यागना क्या उनके कुल की ख्याति के अनुकूल हैं?"'8 दूसरी तरफ राम भी कम द्वन्द्व और धर्म–संकट में नहीं हैं। वह सीता के निर्वासन पर अश्रुपात करते हैं, कुछ दिन अन्न–जल ग्रहण नहीं करते, राज्य–कार्य से विरत रहकर घोर अन्तर्व्यथा में जीते हैं। उनके सामने एक तरफ आदर्श प्रजापालक, प्रजारंजक और पारदर्शी राज–धर्म के पालन का दायित्व है और दूसरी तरफ निष्पाप पत्नी के समर्थ पति के दायित्व के निर्वहन का। अन्ततः वह लोकधर्म, राजधर्म और लोकशक्ति का वरण करते हैं। 'उत्तररामचरितम्' में वर्णन है कि सीता की सखी वासन्ती राम से पूछती है, 'आपने ही सीता को वनवास दिया, फिर आप उनके विरह में अश्रुपात क्यों कर रहे हैं?' उत्तर में राम कहते हैं, 'वासन्ती! लोक नहीं चाहता कि सीता मेरे साथ रहें।' वासन्ती पुनः प्रश्न करती है, 'लोक ऐसा क्यों चाहता है?' राम का उत्तर है, 'वासन्ती! केवल लोक ही जानता है कि मेरे साथ सीता के रहने से उसे क्या आपत्ति है, इस विषय में इससे अधिक मुझे कुछ ज्ञात नहीं है।' इसका अर्थ है कि लोक राजा राम से भी बड़ा है।

रामराज्य में राजा की अपनी कोई इच्छा नहीं। लोक की इच्छा में राजा की इच्छा समाहित है। रामराज्य में लोकधर्म, लोकशक्ति सर्वोच्च है। कदाचित् यही है राजा राम के लोकतंत्रीय व्यक्तित्व का उच्चतम आदर्श, जो लोकतंत्रीय इतिहास में दुर्लभतम उदाहरण है।

लोकतंत्र वस्तुतः मात्र शासन का तंत्र नहीं, सत्ता का अधिष्ठान नहीं, लोक का तंत्र है। लोकतंत्र में 'लोक' शब्द समग्रता या व्यापकता का द्योतक है। यह सर्वसामान्य को अधिकार–सम्पन्न बनाने का माध्यम है। इसमें बिना किसी भेदभाव के सम्पूर्ण समाज की स्वीकार्यता है। लोकतंत्र में लोकशक्ति या लोकधर्म की प्रधानता है। इसका आधार सर्वोदयी चिन्तन और लोककल्याण है। रामराज्य में राजाराम जन–जन के हैं, सम्पूर्ण समाज के हैं। उनके वन–गमन के समय सारी अयोध्या उनके साथ जाने को उद्यत होती है। जब मंत्री सुमंत्र राम, लक्ष्मण और सीता को छोड़कर अयोध्या को वापस चलते हैं तो रथ में जुते अश्व भी राम के स्नेह में वापस नहीं आना चाहते और अश्रुपात करते हैं। राम को वन भेजने वाली विमाता कैकेयी भी उनके सर्वग्राही व्यक्तित्व से प्रभावित हैं। मन्थरा के बहकाने पर प्रथमतः वह कहती हैं– 'कुब्जे! तू राम के राज्याभिषेक का शुभ संवाद सुनकर जलती क्यों हैं? मेरे लिए जैसे भरत आदर के पात्र हैं, वैसे ही राम भी, बल्कि उससे भी बढ़कर। वह अपनी सगी माता कौशिल्या से अधिक मेरी सेवा करते हैं, यदि राम को राज्य मिल रहा है तो उसे भरत का ही समझ ले।' श्रीराम जन–जन में ईश्वरीय सत्ता का दर्शन करते हैं। उनकी दृष्टि में ऊँच–नीच, आर्य–अनार्य, पिछड़े, दलित, अपवंचित, वर्ण, धर्म, सम्प्रदाय आदि का भेद–भाव नहीं। उन्होंने जनजाति समाज की परम भक्त शबरी को मातृतुल्य सम्मान प्रदान किया और पैदल उसके आश्रम में जाकर उसके हाथ से जूठे बेर खाये। यदि ऊँच–नीच का जरा भी भाव उनके हृदय में होता तो अपने हाथों से बेर तोड़कर स्वयं खाते और वृद्धा माता शबरी को भी खिलाते। 'इतना ही नहीं, साध्वी शबरी राम को पुत्रवत् देखना चाहती है और उन्हें अपना दूध पिलाने की आकांक्षा करती है, किन्तु वृद्धावस्था के कारण वात्सल्य के बाद स्तन में दूध आता नहीं। श्रीराम प्रेम से विहल होकर उन्हें आश्वस्त करते हैं कि कृष्णावतार में तुम्हारा जन्म यशोदा के रूप में होगा ओर तब मैं तुम्हारा ही दूध पीऊँगा।' निषादराज भी जनजाति या शूद्र वर्ण के ही थे। उनकी सेवा और प्रेम–भाव से प्रभावित होकर श्रीराम ने उनके हाथ से दिये गये कन्द–मूल–फल आदि ग्रहण करने में कोई संकोच नहीं किया और उनसे मित्रवत् भाव रखा। रावण–वध के बाद अयोध्या आते हुए निषादराज को भी अपने साथ लाये और राज्याभिषेक के बाद विशिष्ट उपहारों से सम्मानित किया। चित्रकूट और पंचवटी में रहते हुए आदिवासियों और वनवासियों के साथ श्रीराम के मधुर सम्बन्ध रहे। माता सीता का हरण कर ले जा रहे दशानन को रोकने के प्रयत्न में गिद्धराज जटायु छिन्नपंख हुए। श्रीराम के चरणों में उनका शरीर छूटा। राघव ने स्वयं अपने कर–कमलों से उनका अन्तिम संस्कार किया। अत्याचारी राजा बलि का वध कर श्रीराम ने उसके लघु भ्राता सुग्रीव (जनजाति) को किष्किन्धा के राजपद पर स्थापित किया। श्रीराम के वन–प्रवास–काल में उनके सभी सहयोगी– जटायु, सुग्रीव, हनुमान, अंगद, जामवन्त, नल–नील, विभीषण आदि नर–वानर, भालू, रीछ, पशु–पक्षी वनवासी थे। उनके साथ श्रीराम के सुहद्वत् सम्बन्ध थे और उन्हीं के सहयोग से लंका पर विजय प्राप्त हुई। लंका विजय के बाद

श्रीराम सभी को साथ लेकर अयोध्या आये और राज्याभिषेक के अवसर पर उन्हें विशिष्ट सम्मान प्रदान कर बहुमूल्य उपहारों से उपकृत किया। यही है राम के लोकतंत्रीय व्यक्तित्व की सर्वग्राह्यता।

जनकल्याण और लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना ही लोकतंत्र का चरम अभीष्ट है। राम का सम्पूर्ण जीवन इस अभीष्ट के लिए समर्पित दिखाई देता है। त्रेता युग में रामावतार के पूर्व स्थिति बड़ी भयावह थी। अत्याचारी, पापाचारी, धर्म–विध्वंसक, राक्षसराज रावण के अत्याचार से पूरी मानवता त्रस्त थी। ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थों, संयासी, ऋषि–मुनि सभी पीड़ित थे। राक्षसों के दुष्कृत्यों से सामान्य जन ही नहीं, श्रेष्ठ ऋषिगण भी संतप्त थे। उनके तपोवन जला दिये गये थे, आश्रम निर्जन हो चुके थे, यज्ञशालाएँ निर्धूम हो गयी थीं। आश्रमों में वेदघोष अवरुद्ध हो गये थे। ऋषि–मुनि राक्षसों के भक्ष्य हो रहे थे। देवराज इन्द्र पराजित हो चुके थे। लोकपाल रावण की आज्ञा मानने पर विवश थे। धर्म, संस्कृति पूर्णतः नष्ट हो चुकी थी। सर्वत्र त्राहि–त्राहि मची हुई थी। इसी परिस्थिति में मर्यादा की स्थापना और मानवता की रक्षा के लिए नर–पुंगव रूप में भगवान् श्रीराम का प्रादुर्भाव होता है। शान्ति और व्यवस्था ही जन–कल्याण का मूल आधार है। अतः प्रथमतः वह राक्षसी शक्तियों का विनाश करते हैं। वह किशोरावस्था में महर्षि विश्वामित्र के आश्रम के यज्ञादि धार्मिक कृत्यों की निर्विघ्नता के लिए यज्ञ–विध्वंसक अधर्मी ताड़का, सुबाहु आदि राक्षसों का वध करते हैं। वन–गमन के समय चित्रकूट में निकलते ही उन्होंने असुर विराध का संहार किया। पंचवटी में श्रीराम के अनुज ने पापाचारी वासना से प्रेरित, कुलटा शूर्पणखा का नाक–कान काटकर उसकी वासना का विग्रह किया। शूर्पणखा की सहायता के लिए आये खर–दूषण और उसकी चौदह सहस्र आसुरी सेना का राघव ने अकेले ही संहार किया। तदन्तर उन्होंने मारीच, कबन्ध, इन्द्रजित्, कुम्भकर्ण और अन्ततः दशानन तथा उनकी समस्त सेना का संहार कर जन–कल्याणकारी धर्मराज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। चौदह वर्ष के वनवास के पश्चात् अयोध्या लौटने पर श्रीभरत से राजपद ग्रहण कर श्रीराम ने लोक–कल्याणकारी राज्य की स्थापना की। समाज की सुख–समृद्धि, वैभव, जन–कल्याणकारी कार्य, शान्ति–व्यवस्था, पारदर्शी प्रशासन एवं निष्पक्ष न्याय के मूल्यांकन के आधार पर ही एक आदर्श राज्य की अवधारणा सुनिश्चित की जाती है। इस कसौटी पर राम का राज्य सुशासन के लिए इतिहास में एक आदर्श मानक के रूप में प्रतिष्ठित है। आइये, अवलोकन करते हैं राम के लोक–कल्याणकारी राज्य की कतिपय विशेषताओं का –

श्रीराम आदर्श राजा हैं। उनके सिंहासनरूढ़ होते ही त्रैलोक्य में हर्ष व्याप्त हो गया। उनके सुशासन से प्रजा के सभी शोक समाप्त हो गये। राजराज्य में किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती थी। सभी लोक निरोग और सुखी थे। प्रजा दैहिक, दैविक और भौतिक सभी तापों से मुक्त थी। राज्य में शान्ति और सुव्यवस्था थी। चोर, डकैत, पापाचारी और अत्याचारी समाप्त हो चुके थे। राज्य में कहीं भी विधवाओं का विलाप सुनाई नहीं पड़ता था। आर्थिक समृद्धि और समुचित पोषण के कारण बाल–मृत्यु नहीं होती थी। सम्पूर्ण प्रजा–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र

अपने–अपने वर्णाश्रमोचित कर्मों में संलग्न थे। प्रजा कर्त्तव्यशील और धर्मपरायण थी। पर्यावरण की शुद्धि के लिए समुचित वृक्षारोपण की व्यवस्था थी। राज्य में पर्याप्त वर्षा होती थी। पृथ्वी सदैव खेती से हरी–भरी रहती थी। देश धन–धान्य से सम्पन्न था। वृक्ष और लताएँ पुष्पों और फलों से लदी रहती थीं। पर्यावरण अत्यन्त विशुद्ध था। जल की व्यवस्था के लिए पर्याप्त जल–संसाधन थे। राजा धर्म–संस्कृति के रक्षक थे। राज्य में अनवरत यज्ञादि कर्मों का सम्पादन होता था। धर्म–शासन था। राजा और प्रजा विधि से शासित थे। राजा धर्म के रक्षक और प्रजापालक थे। राजधर्म निष्पक्ष और पारदर्शी था'9। यही राजा राम की प्रमुख विशेषताएँ थीं। कदाचित् विश्व–पटल पर इससे अधिक लोककल्याणकारी राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भारत में अंग्रेजी शासन से मुक्ति के बाद ग्राम स्वराज के रूप में रामराज्य की कल्पना की थी। स्वतंत्र भारत के पुनर्निर्माण के लिए उन्होंने रामराज्य का स्वप्न देखा था।

भारत आज विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्रीय देश है और जनकल्याणकारी राज्य की अवधारणा पर आधारित है। किन्तु स्वतंत्रता के लम्बे अन्तराल के बाद भी भारत में लोककल्याण की भयावह स्थिति है। आज भारत में विश्व के सबसे अधिक गरीब और निरक्षर व्यक्ति रहते हैं। उच्च शिक्षा की स्थिति यह है कि सरकार उच्च शिक्षण–संस्थाओं को शैक्षिक रूप से समृद्ध बनाने के लिए विदेशी विश्वविद्यालयों को यहाँ लाने के लिए कानून बना रही है, जबकि सदियों पूर्व भारत में तक्षशिला और नालन्दा जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति–प्राप्त विश्वविद्यालय थे, जिनमें विश्व के अनेक देशों से विद्यार्थी यहाँ अध्ययन के लिए आते थे। स्वतंत्रता के अडसठ वर्ष बाद भी गुणात्मक शिक्षा को कौन कहे, देश के युवाओं का अनुपात में यहां विश्वविद्यालय और महाविद्यालय स्थापित नहीं हो सके हैं। ज्ञान–आयोग के एक प्रतिवेदन के अनुसार युवाओं की संख्या के अनुपात में पन्द्रह सौ विश्वविद्यालय और पचास हजार महाविद्यालय और स्थापित होने चाहिए। देश में चरित्र का गहरा संकट है। चारों तरफ भ्रष्टाचार व्याप्त है। देश के कतिपय माननीय सांसद विकास निधि को अवमुक्त करने में कमीशन लेने, संसद में प्रश्न पूछने के लिए पैसे लेने, वोट के बदले नोट, मानव–तस्करी आदि आर्थिक कदाचरण में आरोपित एवं दण्डित हुए हैं। इतना ही नहीं, नागरिकों के अधिकारों की रक्षक और कानून का शासन सुनिश्चित करने वाली उच्च न्यायपालिका के कतिपय माननीय न्यायमूर्ति भी भ्रष्टाचार के आरोप से आरोपित हैं। आज यही स्थिति है विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के लोककल्याणकारी राज्य की। आज तक हम गाँधी के सपनों के भारत को साकार नहीं कर सके हैं। क्या वर्तमान के भारत के राष्ट्र–निर्माता इस पर चिन्तन करेंगे? भगवान् श्रीराम ईश्वर हैं, परब्रह्म परमेश्वर हैं। ईश्वर अजर–अमर और शाश्वत हैं, सर्वत्र विद्यमान हैं। आइये उनके श्रीचरणों में नमन करते हुए उनसे प्रार्थना करें कि वह हमें इतना चरित्रवान्, कर्मशील और सामर्थ्यवान् बनायें जिससे कि हम रामराज्य के आदर्शों के अनुकूल गांधी के सपनों के भारत को बनाने में अपना योगदान कर सकें।

सन्दर्भ–

1 वाल्मीकि रामायण – 1.1.2

2 वा. रा. 2.2.1.10, 2.3.1–3

3 वा. रा. 6.128.60–63

4 वा.रा. वा. रा. 6.128.95

5 वा. रा. 7.59, 1.2–3

6 बृहदारण्यकोपनिषद् 1/4/11.14

7 वा.रा. 12.34.26

8 रघुवंश 14 वां सर्ग

9 वा.रा. 6.128.97–106